रश्मि

२०२४-२५

ज़ाकिर हुसैन दिल्ली कॉलेज

दिल्ली विश्वविद्यालय

संरक्षक

प्रो. नरेंद्र सिंह

प्राचार्य, ज़ाकिर हुसैन दिल्ली महाविद्यालय

शिक्षक संपादक

डॉ. सुरैया खान

छात्र संपादक

देवांश, विशाल, प्रीतम,साहिल,
संजीव, अनुज

संपादक मंडल

२०२४

संपादकीय

भारतीय संस्कृति बेहद विस्तृत है। यह अपनी विभिन्न कलाओं के लिए भी विख्यात है। हमारे संस्कृति में विभिन्न धर्मो, खान पान, वेशभूषा और रहन-सहन में अंतर होते हुए भी कला के क्षेत्र में समानता देखी जा सकती है। कैसे सुदूर बसे हुए गांव के किसी कोने में प्रतिभाएं छिपी रहती है। कोई नहीं जानता ऐसे ही एक गांव दरभंगा के सामान्य से गांव में रहने वाली 80 वर्षीय एक महिला गोबर से आंगन में तरह-तरह की वस्तुओं का निर्माण करते-करते कैसे हस्तकला में निपुण हो गई और वह कला के क्षेत्र में सब पर भारी पड़ गई कोई नहीं जान सकता अपनी जैसी अनेकों स्त्रियों को रोजगार देती उर्मिला जी एक समाज सेविका भी है।

ऐसे ही बिहार के संतोष कुमार जी ने बीते 20 वर्षों में टिकुली कला में अपना योगदान देकर बाकी लोगों को भी प्रशिक्षण प्रदान किया छोटे-छोटे गांव में ऐसे कई संस्थान बना दिए जाते हैं जहाँ हस्तकला की कारीगरी को सिखाया जाता है और सरकार द्वारा इसे बढ़ावा भी दिया जाता है। बिहार के बहुत से ऐसे गांव है जहां मधुबनी, टिकुली और टेराकोटा आदिवासी की देन है। ग्रामीण समाज में अशिक्षित महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने का उन्हें अपनी आजीविका के साधनों को जुटाने का कार्य इन संस्थाओं के माध्यम से लगातार किया जा रहा है।

हमारी संस्कृति के इन्हीं झरोखों को पत्रिका में विभिन्न लेखों तथा साक्षात्कार के माध्यम से दिया गया है। इसके अतिरिक्त प्रथम वर्ष के बच्चों ने बेहद उत्साह के साथ अपनी अपनी रचनाएं पत्रिका के लिए दी जिस रूप में बच्चों ने अपने लेख दिए हैं। उसमें ज्यादा परिवर्तन नहीं किया गया है ताकि वह अपनी कमियों को खुद से पहचाने और उनका उत्साह वर्धन होता रहे बाकी पत्रिका अब आपके हाथ में है कुछ भूल कुछ कमियां इस बार भी रही होगी उसके लिए मैं जिम्मेदारी लेती हूं।

धन्यवाद

काश मैं भी वो परिंदा होता

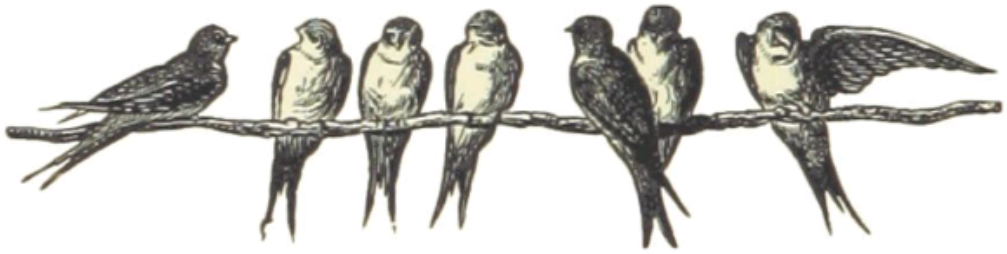

तुम मुझमें और उस परिंदे में फर्क पूछते हो, उड़ना
मेरा सपना था, वह जी रहा था।
मुझे आसमान छूना था, वह माप रहा था, मैं सारी उम्र
एक मिराज़ में जिया, वह असल था।

मैं कब्र में जाने की आस लगाए बैठा,
वह कब्रिस्तान था,
जब वह हवाओं से बात कर रहा था,
मैं खुद से खुद की खुद के लिए लड़ाई लड़ रहा था।
हां, अंत उसका आएगा,
मैं तो अभी भी अपने अंत और प्रारंभ की कश्मकश
में ही उलझा हुआ हूँ।

~ गौरव तिवारी (फरेबी)

बचपन

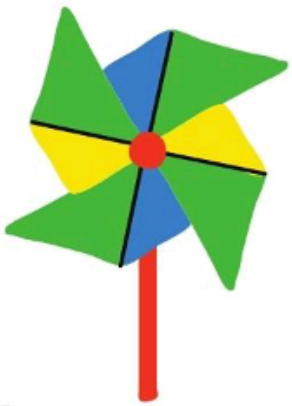

लगता है खो दिया हमने..
या चुरा लिया गया.?
चुराया किसने.?
गंवाया किसने.?
हमने.?
या काम मे मसरूफ इस दुनिया ने..?

क्या बात थी ना बचपन की उम्र पाँच की और बातें पचपन की अपने ही दुनिया मे मस्त रहते थे हम.. दिन भर खेल के थकने के बाद रात को माँ के गोद मे पस्त रहते थे हम.... आजादी के ख्वाब मे बचपन को तो खो ही दिया हमने...

और सबको खुश दिखाकर, अकेले मे तो रो ही दिया हमने... नहीं चाहिए थी ऐसी आजादी जिसमें हमने

खुद के साथ वो बचपना भी गवां दी.. मुस्कराने के लिए अब वजह ढूढ़ना पड़ता है..

पहले तो आसमान मे एयरोप्लेन देख के खुश हो जाया करते थे..

और जो सीख रहे हैं मतलबी पन इस फरेबी दुनिया से, वो भी एक toffee मे चार मिलके खाया करते थे..

ना थी झिझक ना शर्म ना ही लाज और मिल जाये दस (10) का नोट पापा से, तो खिलखिलाते हुए कहते थे पार्टी करेंगे आज..

मगर वो एक जो चाहत थी बचपन मे जवान होने की, आजाद होने की, पर ये पता ना था कि ये तो चाहत थी बर्बाद होने की...

खैर छोरो, सच का सामना तो करना ही पड़ता है और कितना भी रहो उदास, लोगों के सामने तो हंसना ही पड़ता है..

फिर भी खुश रहिए, मुस्कराते रहिए.. और अपने और अपनों के बारे मे सोचिए, फिर कमाते रहिए..

बचपन तो अब लौट नहीं सकता, मगर अपने भीतर बचपना तो ला सकते है और अभी भी छोटी खुशियों को, बड़ा बना सकते हैं!!

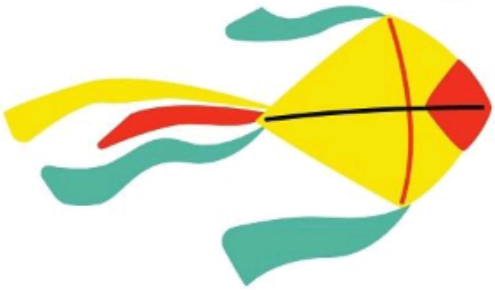

~ रोहित सिंह

टेढ़ा समाज

किसे चुनूं ??
हाथ तो बहुत से बुला रहे हैं मुझे
पिता, चाचा, मामा, भाई, दोस्त
किस-किस के जैसे है यह सब?
समझ नहीं आ रहा
लेकिन लगता है जैसे सब अपने हो
बुला रहे हैं अपने पास
जाऊं या ना जाऊं?
चलो चली जाती हूं
अरे नहीं... नहीं... नहीं
मैंने यह क्या कर दिया ?
सब ने प्यार से बुला के मुझे छू लिया
नहीं.... नहीं.... नहीं....
यह मैंने क्या कर दिया ??
अब समझ में आया कि मुझे वो बुला रहे थे
ताकि प्यार दिखा कर साकार उनके सपने हो
अरे छोड़ो सिर,पेट, हाथ, पैर
उफ्फ...आख़िर मैं छुट ही गई उससे पहले की
हो जाए देर!

~ उजाला कुमारी

जातिवाद की जकड़

मैं आहत वेदना दु:ख से कहूँ
जातिवाद से भारत है जकड़ा।

संप्रदाय कि अग्नि है पकड़ा
मैं आहत वेदना दु:ख से कहूँ ।।

अब बाँध दो मानवता से इसे
कर दो समाप्त जड़ से किस्से।

हम विजयी भारत के वासी
अब नहीं है हम किसी के दासी।।

मैं शारदा नंदिनी जिक्र करूं
अब उठकर देश की फिक्र करूँ।।

~ साक्षी गुप्ता

आशाओं से मुक्ति

आज गगन कुछ भिन्न लगा मुझे.

टूटते तारों में कुछ अपने-तुम्हारे स्वप्न दिखे मुझे। अपने नहीं. स्वप्न अपने और तुम्हारे।

हवाओं की दिशा हमारे आशियाने को न थी। वो रुख बँट जाती प पेड़ों की लम्बी कतार से. बँटे हुए हमारे कल की तरह।

कितना छलावा है इन किरनों में आज. जो कल उम्मीद की धधकती आग से रोशन थी. जला के सारी आशाएं ये मेरे तन को तपा रही है।

तोड़ के सारे बंधन वो जो बहती थी गंगा. नवजीवन के सृजन से सबको हर्षित करती. अर्थी-अवशेषों का लक्ष्य मात्र रह गयी।

पर्वत की ऊंची चोटियां ढंकी हुई श्वेत हिम से. शांति. ठंडक जो देती आई. वस्त्र मात्र रह गयी मेरी नग्न स्मृति पर।

गगन, पवन, सूर्य. नदी. पर्वत जो सब कल मेरे प्रेरणा स्त्रोत थे. आज सब बेगाने हो हंस रहे हैं मुझ पर। तोड़ सभी धागे आशा के आज स्वतंत्र हूं मैं।

~ स्नेहा अधिकारी

तृतीय श्रेणी

आओ लिखे एक कविता, विषय न होगा पुरुष-स्त्री का।

विषय होगा तीसरे समाज का विषय होगा किन्नर के समाज का।

ईश्वर ने नहीं किया कभी किसी में भेद, फिर न जाने मनुष्य ने क्यों किया इनमें भेद।

इनको भी देती है एक माँ जन्म, इनके जन्म पर भी होती है माँ को प्रसव पीड़ा।

फिर क्यों होते ये हमसे अलग क्यों नहीं करता कोई इनसे प्रेम।

इनको देखते ही क्यों आती है हीन भावना ? सजने का शौक इनको भी है लेकिन इनका संचरना हँसी का पात्र क्यों है?
क्या इनकी जात में प्रेम करना वर्जित होता है?

ये कैसा समुदाय है? जहाँ इनके ही माता-पिता से दूर रखा जाए, जहाँ माता-पिता बनने का सौभाग्य नहीं।

क्यों इनका काम शादी करना नहीं शादी में आशीर्वाद देना है,
क्या इनका कोई परिवार नहीं, क्या इनका कोई सम्मान नहीं
ये कैसा समाज है?
बताओ मुझे ये कैसा समाज है।

~ आशिका

क्या देखा तुमने ?

क्या देखा तुमने ?

दिन डूब गया।

क्या देखा तुमने ?

सूर्य गोपन में पर्वत के पीछे. मेघनाद घेरे इस नभ के नीचे। आशा पुरातन स्मृति की ले कर आओ. कहता है जो वो तनिक सुनते जाओ।

चिरायु उस सरिता का बहाव है।

क्या देखा तुमने ? मीन तैरती हुई विरुद्ध उस प्रवाह के. बढ़ती रहती चट्टानें आती धारा में। सामर्थ्य उस स्पर्श का ले कर आओ. कहती है जो वो तनिक सुनते जाओ।

तना हुआ जो वृक्ष है। क्या देखा तुमने?

ताप तेज, वर्षा भीषण सहता. पतझड़ के वियोग. शीत की शीतलता। दृढ़ता उस तनाव का ले कर आओ. कहता है जो वो तनिक सुनते जाओ।

खिल वो पुष्प रहा है! क्या देखा तुमने ?

जल की बुंदें पंखुडियों पे पड़ी. रंगभरी सुगन्धित वाटिका खड़ी। सौंदर्य उस दृश्य का ले कर आओ.

कहती है जो वो तनिक सुनते जाओ।

~ स्नेहा अधिकारी

फिर उसी मोड़ से !

एक शाम ऐसी आए हमें फिर से उसी मोड़ पर ले जाए बीता जो वक्त अब तक उसपर अनभिजता की चादर लिपट जाए।

तुम परिचय अपना दो और मैं पारस्परिक हित ढूँढने लग जाऊँ तुम्हारी हर पसंद ना पसंद का ध्यान, रखने मैं लग जाऊँ।

सुनकर मुझे तुम, शांत सी बैठ जाओ चाहकर भी मुझे ज्यादा कुछ बता ना पाओ घर-परिवार की मान मर्यादाओं के बीच कहीं खोई हुई पाओ।

जन्मदिन एक दूसरे का याद करने हम लग जाएँ मिनटों से शुरू होने वाली वो बातें घंटो तक चलने लग जाएँ।

चुप्पी जिसने छोड़ा नहीं था साथ अभी तक वो भी रिश्ते नाते तोड़ने लग जाए उस शांत से चेहरे पर मुस्कान का वास रहने लग जाए।

मुलाकात की चाह फिर, बढ़ती ही चली जाए इन चांदनी रातों से ज्यादा वो चमकते हुए दिन पसंद आने लग जाएँ।

पहली मुलाकात की चुप्पी एक बार फिर से देखने को मिल जाए फोन पर एक मिनट भी ना शांत रहने वाले लोग सवा-सवा घंटो तक चुप-चाप बैठने लग जाएँ।

प्रेम की गहराइयों में उतरने हम लग जाएँ वादे जन्म जन्म के होने अब लग जाएँ।

ना राम मैं हूँ

ना सीता तुम हो किन्तु रामायण जैसी संरचना होने अब लग जाए।

एक शाम ऐसी आए हमें फिर से उसी मोड़ पर ले जाए बीता जो वक़्त अब तक उसपर अनभिज्ञता की चादर लिपट जाए।

आखिरी मुलाकात में कुछ ना कह पाने की नौबत टल जाए और एक बार फिर से हमें वो पहला प्यार हो जाए।

डू एपिक शिट

अंकुर वारिकु की एक जीवंत सेल्फ हेल्प पुस्तक है जो पाठकों को उनके व्यक्तिगत और पेशेवर लक्ष्य को प्राप्त करने की दिशा में साहसिक कदम उठाने के लिए प्रेरित करती है। वारीकु, के एक उद्यमी और प्रेरक वक्ता, अपने जीवन के अनुभव और अंतर्दृष्टि को एक ऐसे अंदाज में साझा करते हैं जो विभिन्न पृष्ठभूमि से जुड़े पाठकों को प्रेरित करता है।

पुस्तकों को विभिन्न जीवन के पहलुओं जैसे की करियर विकास, व्यक्तिगत विकास और निर्णय लेने जैसे विषयों पर केंद्रित कई छोटे, आसानी से समझ में आने वाली अध्यायों में विभाजित किया है। वारिकु की लेखनी सीधी और संवादात्मक है, जिससे सलाह को समझना और लागू करना आसान हो जाता है। उनकी व्यावहारिक टिप्स और कहानियां पाठकों को अपने जीवन में सुधार करने के लिए क्रियान्वयन योग्य कम प्रदान करती है।

पुस्तक की एक ताकत यह है की यह जोखिम लेने और असफलताओं से सीखने के महत्व पर जोर देती है। वारिकु को पाठकों को उनकी आरामदायक जगह है से बाहर निकालने और चुनौतियों को विकास के अवसरों के रूप में अपने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। पुस्तक में उनकी दूसरों की मदद करने की जोश साफ दिखाई देता है, और उनका उत्साह है संक्रामक है।

हालांकि कुछ अवधारणाएं आत्म सहायता साहित्य से परिचित लोगों के लिए परिचित हो सकती है, डू एपिक शीट" एक ताजा दृष्टिकोण और पाठकों के यात्रा के किसी भी चरण में प्रेरणा की एक खुश्क प्रदान करती है। यह एक प्रेरणादायक पढ़ाई है जो लोगों को अपने सीमाओं को आगे बढ़ाने और आत्मविश्वास के साथ अपने सपनों का पीछा करने के लिए प्रोत्साहित करती

~ कृपा

तेरा खयाल आ जाता है!

बैठे बैठे, अचानक से ना जाने क्या हो जाता है सब कुछ अच्छा चल रहा होता है और तेरा खयाल आजाता है।

हँसते हँसते आँखें रोने लग जाती हैं भूलकर सब कुछ तुझे ढूँढने लग जाती हैं।

भीड़ में भी अपने आप को अकेले देखने लग जाती हैं बारात देखते देखते मय्यत देखने लग जाती हैं।

सोचता है जमाना, ये लड़का पागल सा क्यों हो जाता है?
जानता है मन मेरा, मेरा क्या खो जाता है।
खोये हुए इंसान को ये ढूँढने लग जाता है और लौटकर खाली हाथ रोने लग जाता है।

इलाज ढूँढने तेरा ये तेरे पास ही पहुँच जाता है और तू कमबख्त इसे मार के चला जाता है।

मरे हुए शख्स को देखकर गिद्धों का एक झुण्ड आजाता है बची खुची उम्मीदें उसकी वो खा जाता है।

प्रेम लिखते लिखते ये लड़का मौत लिखने लग जाता है सब कुछ अच्छा चल रहा होता है और तेरा खयाल आजाता है।

~ सत्येंद्र सिंह

कफन

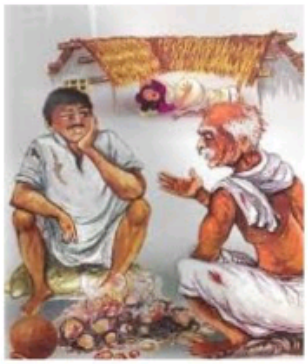

कफन कहानी में मुख्य तीन पात्र घीसू, माधव और माधव की पत्नी बुधीया। घीसू और माधव कहानी के मुख्य पात्र माने जा सकते हैं। प्रेमचंद की इस कहानी को श्रेष्ठतम कहानी में से एक कहानी माना जाता हैं। प्रेमचंद ने इस कहानी में बताया की किस तरह आर्थिक विषमता , बेरोजगारी और निकम्मेपन के कारण सर्वहारा वर्ग स्वार्थी और कामचोर बन जाता हैं कि वह अपनी मृतक पुत्रवधु और पत्नी के कफ़न के लिए एकत्र चन्दे के पैसों को शराब पीने में व्यय कर देता हैं। और अंत में अपने कृत्य का समर्थन करने के लिए रीति रिवाजों को बुरा भला कहता हैं।

इस कहानी में प्रेमचंद जी ने संवाद के मध्यम से पात्रों के चारित्रिक विशेषताओं का वर्णन बड़े ही कलात्मक ढंग से किया हैं। इस कहानी में प्रेमचंद जी ने ग्रामीण वातावरण में किस प्रकार पति और ससुर के संवेदनहीन होने के कारण गांव के बड़े सेठ और वहाँ के ग्रामीण लोग उसके अंतिम संस्कार के लिए चन्दा इकट्टा करके कफ़न खरीदने के लिए देते हैं। और बुधीया के अंतिम संस्कार में भी हिस्सा लेने आते हैं। प्रेमचंद ने इस कहानी में ग्रामीण लोगों की संवेदनाओं और सहानुभूति को बड़े ही अच्छे ढंग से दिखाया हैं। माधव और घीसू ने सेठ और गांव के लोगोँ को जो धोख़ा दिया होता हैं, ग्रामीण लोग उसे भूल कर इंसानियत धर्म का अनोखा मिसाल पेश करते हैं।
इस कहानी की भाषा शैली सरल है और सजीव है उनकी भाषा से ग्रामीण झलक दिखती है लेखक द्वारा आंचलिक भाषा के मुख्य तौर पर इस्तमाल किया गया पठाको का भी ख्याल रखा गया ऐसे शब्दों का ज्यादा इस्तेमाल हुआ जो आम बोलचाल की भाषा में इस्तेमाल किया जाता है
मुश्किल ग्रामीण शब्दों की जगह पर सोच-समझकर सामान्य शब्दों का इस्तेमाल किया गया उद्देश की दृष्टि से यह कहानी यथार्थवादी है अर्थिक विशमता वाले जिस समाज में एक और बड़े लोग बैठे-बैठे दुनिया का सारा आनंद लेते हैं तथा निर्धन मजदूर और किसान दो वक़्त की सूखी रोटी कमाने वाले लोगो के जीवन को संघर्षपूर्ण और सफल बताते हैं शायद घिशु और माधव द्वारे कहानी में लेखक ने यह समझाने का प्रयास किस प्रकार का आलास और कामचोरी व्यक्ति को संवेदनहीन बना देती है।

~ जीशान

इक घर ही नहीं निकलता बच्चों से

थक कर एक दफा 12वीं पास करके बैठे ही थे, निजात पाई ही थी कि उस भारी भरकम बस्ते से सोचा अब कॉलेज के दिन होंगे हर मोड़ पर मजे ही होंगे पर जिंदगी के पन्नों ने एक नया ही बस्ता उपहार में दे दिया था। जिसमें किताबें नहीं थी, थे मां-बाप के सपने, घर की जिम्मेदारी, बेरोजगारी की चिंता और था एक घर से दूर रहना। घर का एक बच्चा अचानक से इतना बड़ा हो गया की खुद की जिम्मेदारीयों को खुद ही समझने लग गया ।

अभी दिल्ली आए हुए 8 महीने ही हुए थे कि इन अनजान गलियों में हर रोज उमड़कर यह सवाल सामने आ ही जाता है कि और कितने दिन लगेंगे?? सुबह कॉलेज के लिए निकलते वक्त चाय की टपरी पर पैसे थामने के बाद भी फीकापन यह एहसास दिलाता है की मिठास चीनी में कम और मां के प्यार में ज्यादा थी। जली हुई रोटियां जिसकी कोई भुजा नहीं थी वह भी इस तरह से खाते थे मानों घर मे माँ ने पराठे बनाकर दिए हो ।

घर से दूर रहने वाले हर एक व्यक्ति के अंदर घर बसता है जिसकी घूमी वह रात को बिस्तर पर सोते वक्त करता है।

महीने के अंत में जैसे तैसे काम चल ही जाता है पर उस 1 तारीख़ के बाद बाबूजी को फोन पर यह कहना कि खर्च भेज दीजिए जरा, व्यक्ति के लिए सबसे मुश्किल कामों में से एक यह भी है पिताजी से पैसे मांगना।

अंतर्मन में हर दिन यह ख्याल आ ही जाता है कि इस बार नहीं मांगेंगे जैसे नौकरी लग ही जायेंगे मग़र हँसी की बात यह भी है कि अभी तक कॉलेज का पहला साल भी पूरा नहीं हुआ है।
छुट्टियां खत्म होने पर घर से निकलते वक्त माँ का पल्लू गिला हो ही जाता है पर पिताजी को नहीं देखा, अब मुझमे इतनी सामर्थ्य ही कहां की अंतर्मन के आंसू भी देख सकूं।
ट्रेन की भीड़ अक्सर यह बोध करा ही देती है यहां हर एक सिद्धार्थ है जो निकल गया घर से बुद्ध बनने के लिए।
किंतु सफल हुए व्यक्तियों को ही समाज द्वारा बुद्ध माना गया बाकियों को ठहरा दिया आवारा, निकम्मा, निठल्ला । अंततः घर से निकला हुआ हर व्यक्ति यही चाहता है की सब कुछ खत्म हो जाए ऊसे कोई चाह नहीं रहती की सब कुछ कितने जोश से शुरू हुआ था। अंत मे वह घर का एक कोना ढूंढ ही लेता है ठहरने के लिए जैसे स्त्री की गोद में ठहरता है पुरुष।
घर से निकल जाते है बच्चे...
इक घर ही निकलता बच्चों से...

~ मुकेश कुमार

ये कैसी दशा है ?

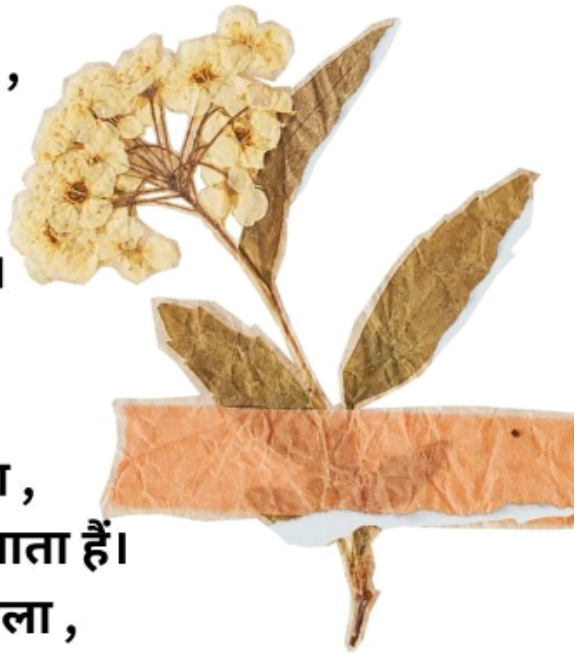

ये कैसी दशा हैं?
घर की स्थिति सुधारने के लिए ,
घर से ही दूर चले जाते हैं ।
अपने परिवार को देखे बिना ,
कई वर्ष प्रवासी बन बिताते हैं ।
ये कैसी दशा हैं ?

घर खाने में नखरे दिखाने वाला ,
अब,खुद जली रोटी बनाकर खाता हैं।
कभी न किसी से भय रखने वाला ,
अब, बंद कमरे में घबराता है।
भाई-बहनों से लड़झगड़ने वाला ,
आज एक-दूसरे को देखने के लिए तरसता है ।
मनचाहा बचपन जीने वाला ,
ज़िम्मेदारियों में उलझा पाता है ।
ये कैसी दशा है ?

पढ़ाई-लिखाई करते-करते अपनों से ,
दूर रहना सीख जाते है ।
नौ-दस की उम्र में माँ-बाप से ,
दूर होने पर रोते-बिलखते और ज़मीन-घिसटने रहने वाला ,
बच्चा एक दिन मिलों दूर बिना देखे ,
ज़िंदगी जीना सीख जाता है ।
ये कैसी दशा है ?

~ संजीव

सोशल मीडिया का प्रभाव

कौन हैं ये जेन-ज़ी और इनमे परेशानी की क्या जड़ है? तो इसका साफ सीधा उत्तर है - 1997 से लेकर 2012 तक के बीच मे पैदा हुए , उन्हें कहा जाता है :-जेन-ज़ी। इसका मतलब है की अगर किसी व्यक्ति की उम्र 12-27 के बीच में है तो वो एक "जेन-ज़ी" है।

-- मूल्यहीन पीढ़ी

-- वो पीढ़ी जहां संबंधों का मतलब कुछ भी नही है

-- वो पीढ़ी जो पूरी तरह से अवसाद ग्रस्त है

तो आखिर "जेन-ज़ी"में ही इतनी दिक्कतें क्यूं है? क्या है इसके पीछे की सच्चाई?

"मुश्किल वक्त ही ताकतवर इंसान को बनाता है, ताकतवर इंसान ही अच्छा वक्त लेकर आता है, अच्छा समय कमजोर इंसान की उत्पत्ति करता है और कमजोर इंसान ही मुश्किल वक्त को लेकर आता है।

वो पीढ़ी जो 1940 से पहले थी उन्होंने सबसे ज्यादा संघर्ष किया और उसके बाद आती है हमारे दादा-दादी और मम्मी - पापा वाली पीढ़ी , ये पीढ़ी परिस्थिति के अनुकूल रहने वाली अथवा सकारात्मक थी और इसी पीढ़ी से उत्पति होती है उस पीढ़ी की जिसे "जेन - ज़ी" कहा जाता है।

इस सबकी शुरुआत होती है इंटरनेट से। इंडिया में 15 अगस्त 1995 में इंटरनेट को लोगो के इस्तेमाल के लिए शुरू कर दिया गया। "जेन - ज़ी" को बचपन से ही मिल गया जिसके कारण उनके सामने सोशल मीडिया का खुलासा बालपन से ही हो गया।

-- इंडियन एक्सप्रेस की एक रिसर्च के अनुसार इंडिया में 43% बेरोजगार लोग 25 वर्ष की आयु से कम है।

आखिर ऐसा होता क्यूं है? जेन-ज़ी के साथ काम करना इतना मुश्किल क्यूं है?

क्योंकि इनमे अनुशासन, एकाग्रता की अत्यधिक कमी है; ये वो पीढ़ी जिसका संचार कौशल ना के बराबर है ; ये वो पीढ़ी है जो बहुत जल्दी ऑफेंड (आघात) हो जाती है।

इस सबके पीछे सबसे बड़ा हाथ है सोशल मीडिया, बॉलीवुड और भी बहुत कुछ।

सोशल मीडिया में आते है - इंस्टाग्राम, स्नैपचैट, व्हाट्सएप वगैरा वगैरा। इन सबने बच्चो के मन पर बेफालतू का दबाव बना के रखा है। जैसे - स्नैपचैट की स्ट्रीक। स्ट्रीक्स (streaks) अब ये क्या अजूबा है। रुकिए ज़रा समझते है इसे; तो साफ शब्दों में ये कुछ भी नही है बस "कहा हो,कहा बैठे हो, कहा खड़े हो" की छोटी छोटी वीडियो है।

और सबसे बड़ी बात ये है की 24 घंटो में एक बार ये वीडियो भेजनी पड़ती है वरना स्ट्रीक टूट जायेगी ; अब तो आपने देख ही लिए ये बेफालतू का काम और इसका बच्चो के मन पर असर।

अर्थहीन संबंधों का समय

टिंडर, ट्रूलीमैडली, बम्बल जैसे डेटिंग एप्स मार्किट में भरे पड़े है। विपरीत लिंग के अत्यधिक विकल्प , खुलासे के कारण इंसान एक कुंडली में फंस जाता है।इसी वजह से वो एक ऐसी दुनिया में पहुंच जाता है जहां संबंधों का कोई महत्व नहीं है और "हुक-अप्स" जैसे कल्चर की लहर चल रही होती है। इसीलिए रोज नई - नई टर्म्स निकल कर आ रही है; जैसे - सिचुएशनशिप, फ्रेंड विद बेनिफिट्स , बेंचिंग ,कैजुअल-डेटिंग और तो पता नही क्या क्या।

अवसाद ग्रस्त पीढ़ी

दिलोईट की एक रिसर्च के अनुसार 42% जेन-ज़ी डिप्रेशन से ग्रस्त है , 53% घबराहट से और 57% स्ट्रेस से।

इसका मुख्य कारण ही सकता है - अश्लील कंटेंट की लत। जितना ज्यादा एक व्यक्ति ये अश्लील कंटेंट देखता है उतना ज्यादा उसके दिमाग से डोपामिन निकलता है जिसके कारण व्यक्ति का मस्तिष्क असंवेदनशील हो जाता है।

बहुत हो गई जेन ज़ी की बुराई आखिर में मैं भी तो एक जेन जी ही हूं।अब बात करते है के कैसे इन चीज़ों में सुधार लाया जा सकता है।

पलायनवाद कभी भी एक विकल्प नहीं होना चाहिए। इसका मतलब है की अगर आपके जीवन में परेशानी है तो उसे सुधारने ही आपका केंद्र होना चाहिए न की उससे भागते रहना।(पलायनवाद बहुत तरह का होता है जैसे - शराब , सोशल मीडिया आदि)

सोशल मीडिया को एक सीमा तक इस्तेमाल करना ।

घटनाओं , विचारो को अपने तरीके से सोचना; ना के दूसरों के बनी - बनाई फालतू बातो मे आ जाना; यदि सामने वाले की बात सही नही है तो उसे वैसा का वैसा अपने चरित्र में नही उतार लेना चाहिए इसकी बजाय अपने दिमाग से काम लेना चाहिए।

~ दिशा

जातियों का अनूठापन

(जातियों का अनूठापन)

राष्ट्रीयता के निर्माण में जातिवाद एक बहुत बड़ी बाधा बनी हुई है। किसी जाति के अनूठेपन का एक बहुत बड़ा कारण उनका प्राकृतिक वातावरण होता है। जो उसे अन्य जातियों से अलग करता है।

भट्ट जी इस निबंध में भारत को जातियों की भिन्नता को सामान्य बताकर सबको समान मानते हुए दिखाई देते हैं। और भारत को एक आधुनिक राष्ट्र के रूप में संगठित करने का प्रयास हमें इस निबंध में देखने को मिलता है।

मूलतः भट्ट जी राष्ट्रीयता की भावना की लोगों में बनी रहे और जातियों को लेकर भिन्नता की भावना से लोग मुक्त रहें।

भट्ट जी लिखते हैं देश की उन्नति और वास्तविक भलाई करने का द्वार हम राजनीतिक एकता को ही मानेंगे।

अंग्रेजों की राजनीतिक एकता ही उसकी उन्नति का कारण बनी और हम राजनीतिक एकता के अभाव में आपस में लड़ते रह गए।

जातियों का अनूठापन है क्या ?

जब हम किसी एक जाति पर ध्यान देते हैं तो निश्चित उसे जाति के आचरणों से कुछ ऐसी बातें दिखाई देती हैं। जो खास उसी जाति में पाई जाती हैं।

जातियों में अनूठापन आता कहां से है|

1)आकस्मिक अचानक तो नहीं आता।

2) इसका पूरा इतिहास है।

3) अब इस इतिहास को देखने से यह समझ आएगा कि अनूठापन आया कैसे क्या कारण थे और उसका क्या प्रभाव पड़ा।

हिंदी प्रदीप के संपादक बालकृष्ण भट्ट भारतेंदु मंडल के सबसे वरिष्ठ सदस्य थे। भट्ट जी भारतेंदु युग तथा द्विवेदी युग को जोड़ने वाले ऐसे व्यक्ति थे। जिन्होंने नाटक, उपन्यास, निबंध, आलोचना, पत्रकारिता, पुस्तक समीक्षा आदि अनेक क्षेत्रों में योगदान दिया किंतु उनकी प्रतिभा मुख्यतः निबंध में ही चमकी है।

भट्ट जी ने यूँ तो भावनात्मक, वर्णनात्मक, कथानक तथा विचारात्मक सभी प्रकार के निबंध लिखे हैं।

इसलिए इन्हें 17वीं शताब्दी के पश्चिम निबंधकार जोसेफ एडिसन जो बुद्धि प्रदान निबंध लिखने के लिए विख्यात सदृश्य के आधार पर हिंदी का एडिसन भी कहा जाता है।

भट्ट जी के प्रमुख निबंध हैं। चंद्रोदय, एक अनोखा, स्वप्न

भट्ट जी ने अनेक नाटकों का भी प्रणयन किया है। कलीराज की सभा, चंद्रसेन, खेल, बाल विवाह आदि प्रमुख हैं।

~ मोहम्मद हैदर

गांव और शहर

जीवन में मैं कुछ मामलों में थोड़ा सा स्वार्थी और रुढिवादी हूँ। आज मैं उन में से एक मामला का यहा पर जिक्र कर रहा हूँ। वो ये है की मैं कभी नहीं चाहता की दुनिया में कही भी कोई शहर बसे। अगर बसे भी तो किसी की गाँव के लाश पर तो हरगिश न बसे ।

ऐसा क्यों?

इसका जवाब कुछ ऐसा है की अगर कोई शहर बसता है तो सबसे पहले उस गाँव के लोग के संस्कृति को निगल जाता है।

गाँव की संस्कृत क्या है?

गाँव की संस्कृति, कबीर साहब के इस दोहे में बहुत ही बेहतरीन तरीके से प्रकट होता हैं :-

“साई इतना दीजिए, जामें कुटुम समाय।
मैं भी भूखा न रहूँ, साधु न भूखा जाय"।।

वैसे इस दोहे में कबीर तो अपने बारे में कह रहे हैं। पर हम ये मान सकते हैं की ये कबीर अपने पूरे समाज के बारे में कह रहे हैं क्योंकि कोई भी रचनाकार अगर कुछ भी रचना करता है तो उस के पीछे उसका समाज का भी योगदान होता है। कबीर का सामाजिक पृष्ठभूमि भी कही न कही ग्रामीण ही था। इन सभी आधारो पर कह सकते हैं की कबीर ने यह दोहा अपने और अपने समाज के बारे में लिखा था।

कबीर अपने बारे में कहते है की हे प्रभु आप मुझे सिर्फ इतना दीजिए की जिसमें मैं, मेरा परिवार, और समाज और अगर कोई भूखा आ जाए, ज्ञानी आ जाए, साधु आ जाए तो वो भी भूखा न जाए। इस से ज्यादा मुझे नहीं चाहिए ।

तो यहाँ पर देख सकते हैं की कबीर अथवा उनका ग्रामीण पृष्ठभूमि आत्मसंतुष्टि से परिपूर्ण है। यही ग्रामीण समाज की हकीकत भी है। पर जब उसी ग्रामीण समाज को शहरीकरण की ओर धकेला जाता है, तो वो खुद को मार कर शहरी बनने के लिए दौर पड़ता है। इस दौरान उसमें शहर की मूल प्रवृत्ति घर कर जाती है, जो की इस प्रकार है:-

i). लोभ या लालच
ii). इर्ष्या या द्वेष
iii) घमंड
iv). अकेलापन
v) अति की भूख
vi) समय का अभाव

ये सब प्रवृति कहाँ तक उचित है ये तो शहर बसाने वाले ही जाने। पर जो एक हकीकत, सच्चाई, ईमानदारी है वो तो सिर्फ गाँव में है है। शायद इसलिए का 'महात्मा गांधी' ने कहाँ कहा की “Nature has enough for everyone’s need to but not for greed".

यहाँ पर देख सकते है की गाँधी, स्पष्ट रूप से कहते हैं की प्रकृति के पास वो सबकुछ है जिस से किसी की जरूरत को खत्म किया जा सके का पर किसी की लालच को खत्म करने के लिए प्रकृति के पास प्रयाप्त नहीं है।

यहाँ पर गाँधी कहीं न कहीं दो समाज की कल्पना कर रहे है जिसमे से एक के लिए उतना पर्याप्त जो उसे अपने आस पास प्रकृति से मिल जाता है। दूसरा एक वैसा समाज है जो की जितना मिले वो उस के लिए कम ही है। ये कहीं न कहीं शहरी समाज के प्रति संकेत करता है।

शायद इसलिए गाँधी ने ग्राम स्वराज की कल्पना की, जँहा पर एक गाँव के पास पर्याप्त राजनीतिक, आथिर्क हो। जिस से की वो अपनी है सम्स्या का हल स्वयं ढूंढ सके।

इसी को लेकर रविदास नाम के भक्तिकालीन कवि ने भी कहाँ है:-

‘ऐसा चाहूं राज मैं, जहां मिले सबन को अन्न।
छोट बड़े सब सम बसै, रैदास रहे प्रसन्न ।।

यहाँ पर रैदास/रविदास ने जिस देश की कल्पना की है वो भी कहीं न कहीं किसी गाँव को लेकर ही होगी क्योंकि देश का अर्थ जो हम आज समझते हैं वो उस समय नहीं था ।

अत: कह सकते हैं की किसी गाँव को गाँव ही रहने देने में बेहतर है। उसमें कुछ सुधार कर के पर वो सुधार वैसा न हो की उस से उस गाँव का अस्तित्व ही समाप्त हो जाए। ये काम कहीं कहीं न कही गाँधी के ग्राम स्वराज की अवधारणा को पूरी कर सकती है।

~ शुभम कुमार(बिहारी)

सद्गति कहानी की समीक्षा

सद्गति प्रेमचंद द्वारा रचित एक बहुचर्चित कहानी है। यह कहानी प्रेमचंद की उन कहानियों में से एक है जिसे पढ़कर पाठक वर्ग का ह्रदय विचलित हो जाता है यह कहानी धार्मिक पाखंड, छुआछूत, भेदभाव , कर्मकांड, छलावा, रूढ़िवाद को दर्शाती है साथ ही दलितों के साथ हो रहे शोषण को दर्शाती है।

प्रेमचंद की कई कहानियां दलितों के साथ हो रहे शोषण को दर्शाती है। परंतु सद्गति कहानी शोषण के साथ-साथ ब्राह्मणवाद, सामन्तवाद (जो कि ब्राह्मणवाद का एक अंग है।) को मुख्य रूप से उजागर करती है। इस कहानी के केंद्र में मुख्यतः शोषित वर्ग है।

इस कहानी का मुख्य पात्र दुखी है वह जिस जाति से आता है वह चमड़े के उद्योग से जुड़ी एक विशेष जाति आधारित है। समाज में जातिव्यवस्था और छुआछूत अपनी उस चरम अवस्था में है। कि दुखी को ठाकुराइन के घर से खटिया और आग तो दूर रहा एक लोटा पानी तक नसीब नहीं होता है और पंडित का खटोली पर ना बैठना, बर्तन में भोजन न करना, निचली जाति के लोगों का घर में प्रवेश न करना, इत्यादि छुआछूत, ब्राह्मणवाद और जाति-व्यवस्था जैसी संकीर्ण मानसिकता को दर्शाता है।

यह कहानी दुखी की बेटी के विवाह की साईत (मुहूर्त) से शुरू होकर स्वयं दुखी के मृत्यु को प्राप्त होने पर समाप्त होती है। ब्राह्मणवादी शोषक वर्ग के द्वारा दलितों पर हो रहे अत्याचार का खुलासा होता है इसी कहानी पर 1981 में 'सत्यजीत रे' के द्वारा फिल्म का निर्देशन किया गया है। जिसमें 'ओमपुरी' ने दुखी के किरदार की भूमिका निभाई है यह कहानी दुखी और उसकी पत्नी झुर्रिया , पंडित घासीराम उनकी पत्नी पंडिताइन तथा चिखुरी गोंड के इर्द-गिर्द घूमती हुई ग्रामीण परिवेश का चित्रण करती है। दुखी अपनी बेटी की शादी की साईत(मुहूर्त) निकलवाने के लिए पंडित घासीराम को बुलाने के लिए जा रहा होता है तभी अपनी पत्नी को सचेत करता है कि मैं पंडित जी के बैठने के लिए महुए की पत्तल बना लेना और सीधा भी तैयार करना लेकिन स्वयं हाथ ना लगाना बल्कि झुर्री गोंड की लड़की को लेकर साहू की दुकान से सीधा लाना और एक थाली में रख कर व उसमें चार पैसे भी रखवा देना।

इसके पश्चात दुखी पंडित घासीराम की गाय के लिए नजराने के तौर पर घास का गठर लेकर जाता है।

प्रेमचंद पंडित घासीराम का चरित चित्रण करते हुए बताते हैं कि घासीराम ईश्वर के परम भक्त थे उनके पूजा की शुरुआत भंग से शुरू होकर चंदन, टीका, रोरी, पूरे शरीर पर चंदन के लेप और ईश्वर की मूर्ति को नहलाने और आरती से समाप्त होता। उसके पश्चात दो चार जजमान बाहर द्वार पर खड़े हुए मिलते जिससे उन्हें शीघ्र ही कर्म का फल मिल जाता।

जब दुखी पंडित घासीराम के घर पहुंचता है तो पंडित को देवता का रूप समझकर खुश हो जाता है और दुखी अपनी बेटी के शादी की साईत (मुहूर्त) निकालने की बात पंडित से कहता है तो पंडित कहता है कि उसके पास समय नहीं है हो सकेगा तो शाम तक आएगा ।उसके बाद घास को गाय के सामने डालने और द्वार पर झाड़ू लगाकर लीपने के लिए कहता है इसके बाद भूसा ढोने और लकड़ी चीरने का आदेश भी 'पंडित घासीराम', 'दुखी' को देता है।

दुखी ने सब काम कर दिया परंतु लकड़ी चीरना उसके वश की बात नहीं थी क्योंकि उसे लकड़ी चीरने का अभ्यास नहीं था और साथ ही वह सुबह से न कुछ खाया था न ही पीया था। लकड़ी की गाँठ इतनी मजबूत थी की दुखी कुल्हाड़ी चलता पर यहां लकड़ी पर कुछ असर नहीं होता। वह थककर बैठ जाता फिर उठता और फिर कुल्हाड़ी चलता उसके हाथ पांव पर कांप पर रहे थे।
उसके बाद दुखी सोचता थोड़ी तंबाकू पी लेता हूं जिससे शरीर में थोड़ी ताकत मिलेगी। इसलिए वह आग मांगने के लिए पंडिताइन के पास जाता तो उसे पंडिताइन से घृणा भारी दुत्कार मिलती है। यहां पंडिताइन की जातिवादी एवं छुआछूत जैसी संकीर्ण मानसिकता का पता चलता है।
यहां पर हमारे सामने एक और बात उभरकर कर आती है कि स्वयं पितृसत्ता से शोषित स्त्री वर्ण व्यवस्था और जातिवाद, छुआछूत जैसी संकीर्णताओं से ग्रसित है। पंडिताइन के द्वारा चिमटे से फेंक कर आग देना छुआछूत जैसी गंभीर समस्या को दर्शाता है। इसके बाद दुखी आग लेकर चिलम पीता है और द्वारा लकड़ी चीरने लग जाता है परंतु अभी भी उससे लकड़ी की गांठ नहीं फट रही है। यह गांठ रूढ़िवाद और ब्राह्मणवाद की गांठ है उसकी कुल्हाड़ी उसके सामर्थ्य, समाज में उसकी स्थिति और उसकी दशा को दर्शाती है।उसे समाज के पाखंड अच्छे बुरे संस्कार को ढोना जरूरी लगता है। शोषित समाज में कोई वैज्ञानिक चेतना नहीं है।

इसमें दुखी की स्थिति बहुत गंभीर होती है अंत में वह अपनी बेटी के विवाह की साईत(मुहूर्त) के लिए पंडित को तो नहीं ले जा पाता किंतु पंडित द्वारा दिए गए कार्य को करते-करते अपने प्राण अवश्य त्याग देता है। इससे स्पष्ट होता है कि ब्राह्मणवाद की इस लीला में दुखी पीसकर मर जाता है वह उसे ब्राह्मणवादी गांठ को तोड़ नहीं पता लेकिन अपने प्राण अवश्य त्याग देता है

श्रम और भूख से पीड़ित दुखी लकड़ी की गाँठ फाड़ते - फाड़ते मौत के घाट उतार गया। और इस श्रद्धा भक्ति का फल उसे मृत्यु के बाद भी अपमान के रूप में मिला। उसके सबको घासीराम और उनकी पत्नी पंडिताइन ने हाथ नहीं लगाया उल्टे वहां रो रही दुखी की पत्नी,लड़की और मोहल्ले की महिलाओं को अपशब्द कह डालें। दुखी की लाश उठाने उनके मोहल्ले से कोई दलित नहीं आया और शाम को उसकी पत्नी और लड़की रोकर घर चली गई । और जब लाश सड़ने लगी तो घासीराम ने दूर से उस पर रस्सी का फंदा डालकर किनारे तक घसीट डाला और अपवित्र होने के कारण स्नान एवं पूजा की। उधर दुखी की लाश को खेत में गीदड़ और गिद्ध ,कुत्ते और कौए नाच रहे थे। यही दुखी के जीवन पर्यंत की भक्ति सेवा और निष्ठा का पुरस्कार था।

~ प्रीतम यादव

आदिवासी सौदा नहीं करते

नयी दिल्ली, 9 अप्रैल 2024। ज़ाकिर हुसैन दिल्ली कॉलेज में हिन्दी विभाग के 'साहित्य सभा' द्वारा 'आदिवासी साहित्य: इतिहास और परम्परा' विषय पर सेमिनार का आयोजन किया गया। इस अवसर पर मुख्य वक्ता दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की प्रो. स्नेह लता नेगी ने अपनी बात रखते हुए आदिवासी इतिहास और परम्परा पर विस्तार से चर्चा करते हुए कहा कि आदिवासी अपनी जमीन और जमीर का सौदा नहीं करते।

आदिवासी पद के अभिप्राय एवं विचार की समाजशास्त्र, राजनीति, इतिहास और साहित्य में क्रमवार चर्चा करते हुए प्रो. नेगी ने आदिवासी समुदाय की लोक परंपराओं, इतिहास और शौर्य गाथाओं का उल्लेख भी किया। उन्होंने आदिवासी साहित्य की अवधारणा प्रस्तुत करते हुए याचिक और लिखित रूपों के फर्क को भी स्पष्ट किया रांगेय राघय, मैत्रेयी पुष्पा, रणेंद्र और पीर भारत तलवार के लेखन का जिक्र करते हुए उन्होंने अपनी बातों को पुष्ट किया।

वाचिक परंपराओं में बिरसा मुंडा, आदिवासी स्त्री विद्रोह आदि आन्दोलनों के बारें में संक्षिप्त परिचय देते हुए उन्होंने अपनी बात को आगे बढ़ाया और कहा कि आदिवासी समाज सामाजिक परंपराओं से होते हुए साहित्य में उभरा। रामदयाल मुंहा की चर्चित कष्ठानी "खरगोशों का कष्ट' को आदिवासी समाज का प्रतीक बताते हुए एक नए संदर्भ में उसकी व्याख्या की। इन्होंने समकालीन आदिवासी रचनाकारों की कुछ रचनाओं का जिक्र करते हुए आदिवासी संवेदना को समझाने का प्रयास किया। ज़ाकिर हुसैन दिल्ली कॉलेज के प्राचार्य प्रो. नरेंद्र सिंह ने मुख्य वक्ता का स्वागत करते हुए उन्हें पौधा प्रदान किया। हिंदी विभाग के वरिष्ठ शिक्षक प्रो. हरेंद्र सिंह, डॉ. पचन कुमार एवं अन्य शिक्षकों और श्रोता विद्यार्थियों ने अपने प्रस्सों से कार्यक्रम को अधिक सजीव बना दिया। धन्यवाद ज्ञापन साहित्य सभा की संयोजिका डॉ. नीलम ने दिया।

~ विशाल

'ज़ाकिर हुसैन दिल्ली महाविद्यालय' की आन्तरिक गुणवत्ता आश्वासन प्रकोष्ठ तथा अरुणोदय : हिन्दी साहित्य सभा द्वारा दिनाँक '09 अप्रैल 2024' को "आदिवासी साहित्य : इतिहास और परम्परा" विषय पर सेमिनार का आयोजन किया गया। इस अवसर पर दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की प्रो. स्नेहलता नेगी बतौर मुख्य वक्ता के रूप में उपस्थित रहीं। प्रो. नेगी ने "आदिवासी साहित्य:- इतिहास और परंपरा" विषय पर अपना व्याख्यान प्रस्तुत किया प्रोफेसर नेगी ने बात रखते हुए आदिवासी इतिहास और परम्परा पर विस्तार से चर्चा करते हुए कहा कि आदिवासी अपनी जमीन और ज़मीर का सौदा नहीं करते।

चित्रिका

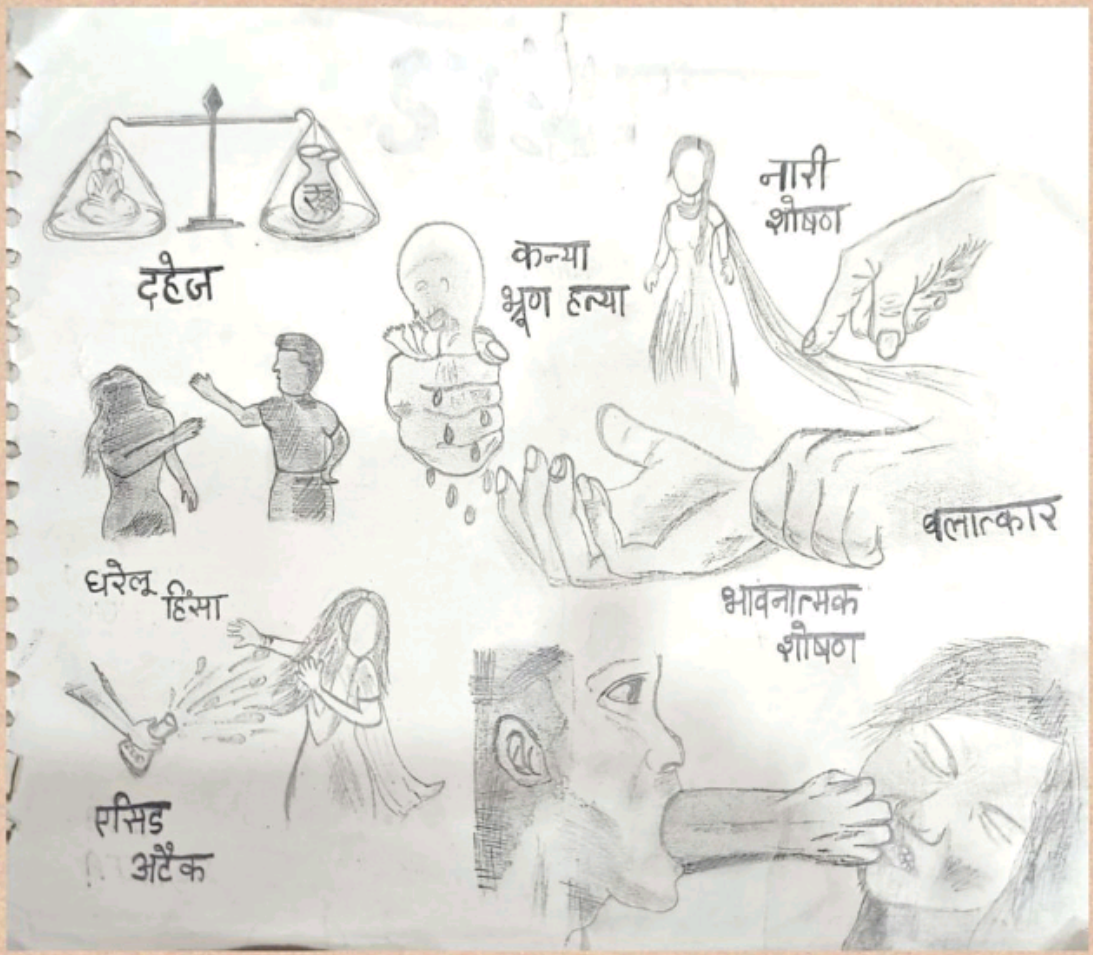

चित्रकार - कृपा

मेरा पहला सफर

दिन 4 नवंबर 2022
आज सुबह जब में उठी तो मन में एक खुशी थी क्योंकि आज मैं पहली बार अपने कॉलेज के सीनियर्स के साथ दिल्ली के बाहर मथुरा वृंदावन घूमने जा रही थी।

मेरी बड़ी बहन और मेरा मित्र मुझको निजामुद्दीन रेलवे स्टेशन छोड़ने गए थे वहीं मेरे सीनियर्स मुझको मिलने वाले थे मेरी कक्षा में पढ़ने वाला मेरा सहपाठी निखिल भी हमारे साथ गया था सबसे पहले रेलवे स्टेशन पर मुझको वही मिला था, स्टेशन पर जाकर हमने टिकट ली ।
मथुरा जंक्शन की टिकट लेने बाद मैंने अपनी दीदी और अपने मित्र को अलविदा कहा और अपना बैग अपने कंधों पर उठा लिया,
उस समय मुझको ये अनुभव हुआ की अब अपनी जिम्मेदारी खुद उठाने का समय आ गया है। फिर सभी सीनियर्स हमें मिले और लगभग 12 बजे हमने मथुरा जंक्शन की ट्रेन पकड़ ली, जनरल डब्बा था इसलिए ट्रेन में भीड़ भी बहुत थी मैं पहली बार जनरल डब्बे में सफर कर रही थी खैर हम सभी को सीट मिल ही गई थी फिर में खिड़की से बाहर देख कर मन ही मन बहुत खुश ही रही थी पर थोड़ा सा डर भी रही थी क्योंकि पहली बार परिवार के बिना कहीं जा रही थी।
लगभग 3:30 या 4 बजे तक हम मथुरा जंक्शन पहुंच गए।
फिर हमने एक रिक्शा लिया और चल दिए वृंदावन की सैर करने
सबसे पहले हम बांके बिहारी मंदिर गए जहां पर हमेशा की तरह उस दिन भी भीड़ थी लेकिन हम सभी ने बहुत अच्छे से दर्शन किए।
बाहर निकलने के बाद फिर हमने एक रिक्शा लिया और हम पहुंच गए प्रेम मंदिर जिसे प्रेम का प्रतीक भी माना जाता है।
वाकई प्रेम मंदिर बहुत सुंदर जगह है वहां जाकर मेरे मन को बहुत शांति मिली थी सच कहूं तो उस जगह से आने का मन नहीं कर रहा था।
ऐसा कहा जाता है की प्रेम मंदिर वही स्थान है जहां राधा कृष्ण रास करते थे।
रात्रि के समय प्रेम मंदिर की सुंदरता में चार चांद लग जाते हैं जब वहां पर शाम के समय झरनों से नाइट शो दिखाया जाता है जिससे देखकर ऐसा लगता है जैसे झरने नृत्य कर रहे हो वो छवि आज भी मुझे याद आती है तो बहुत अच्छा लगता है कि मैं वो देख पाई।

प्रेम मंदिर घूमने के बाद हम लोगों ने होटल लिया।फिर हम होटल गए। हम सभी बहुत थक गए थे तो बिस्तर पर सोते ही नींद आ गई थी।
अगले दिन हम लोग बरसाना और नंद गांव घूमने के लिए निकल गए बरसाना और नंद गांव वृंदावन से दूर था जाने में 2-3 घण्टे तो आराम से लग गए थे, सबसे यादगार पल यही सफ़र था क्योंकि ऑटो में बैठकर हमने अपने स्पीकर में भजन बजाए और पूरे रास्ते आनंद लिया था हमारे ऑटो में 2 भैया और थे जो दिल्ली के ही थे वो भी हमारे साथ आनंद ले रहे थे सफर का।

उसके बाद हम नंद गांव पहुंचे जहां हमने एक घर देखा जहां पर टॉयलेट: एक प्रेम कथा फिल्म की शूटिंग हुई थी। उसके बाद हम लोग कृष्ण जी के मंदिर गए जो नंद गांव में स्थित है वो भी मंदिर बहुत सुंदर था।

उसके बाद हम बरसाना के लिए निकल गए वहां हमने राधा जी के मंदिर (श्री लाडली जी महाराज) के दर्शन किए इस मंदिर में लगभग 250 सीडियां चढ़नी पड़ती है जब जाके राधा जी के दर्शन होते है।
ऐसा कहा जाता है की राधा जी का जन्म स्थान बरसाना ही है।
उसके बाद शाम होने लगती है तो हम सभी वृंदावन वापस आ जाते है और आज हम किसी होटल में नहीं एक धर्मशाला में रुकते है। धर्मशाला में रुकना ये मेरे जीवन का पहला अनुभव था क्योंकि मैं कभी किसी धर्मशाला में नहीं रुकी थी।
फिर सुबह 4 बजे उठकर मैं और मेरी सीनियर दीदी स्नान करने चले गए । उसके बाद हम सभी एक एक करके तैयार हो गए और सुबह सुबह चाय पीने के लिए धर्मशाला से बाहर आए। वैसे मैं चाय नहीं पीती हूं लेकिन उस दिन सुबह की शीत लहर में वो गर्म चाय बहुत अच्छी लग रही थी।

चाय नाश्ता करके हम निधिवन घूमने गए जो की बहुत सुंदर था वहां की पेड़ों की आकृति ऐसी लग रही थी जैसे की पेड़ भी नृत्य कर रहा हो उसके बाद हम वही पास में यमुना घाट था हम वहां गए और झूला भी झूला यमुना घाट देखा वाकई ये जगह बहुत सुन्दर थे।

उसके बाद हमने मथुरा जंक्शन के लिए ऑटो लिए और रास्ते से एक दुकान से पेड़े लिए थे क्योंकि मथुरा वृंदावन के पेड़े बहुत प्रसिद्ध है। फिर हम मथुरा जंक्शन पहुंचे और हमने कुछ खाया। मेरी यात्रा सिर्फ यहीं खत्म नहीं हुई उसके बाद कुछ ऐसा हुआ जिसकी मैंने कभी कल्पना भी नहीं की थी।

ट्रेन में भीड़ के वजह से मैं और मेरे सीनियर्स अलग डब्बे में चढ़ गए थे ट्रेन एक ही थी लेकिन सीनियर्स आगे वाले डब्बे में चढ़ गए थे और मैं पीछे वाले में उस समय बहुत डर गई थी क्योंकि उस भीड़ में में किसी को नहीं जानती थे , अनजान लोग थे और मेरा बैग भी भारी था, मुझको बहुत रोना भी आ रहा था मेरी आंखों में अश्रु भरे हुए थे लेकिन कहते हैं न कभी कभी सफर कुछ अच्छे लोगों से भी जान पहचान हो जाती है, जिन दो भईया से हम ऑटो में मिले थे वो भी दिल्ली ही जा रहे थे और वो उसी ट्रेन में उसी डब्बे में थे उन्होंने मुझे देखा तो पहचान लिया और फिर उन्होंने मुझसे पूछा कि आपके बाकी दोस्त कहां गए मैंने उनको बताया की कैसे मैं अपने सीनियर्स से बिछड़ गई।
पूरे रास्ते वो दोनों भैया मेरे साथ ही खड़े रहे और मेरा बैग भी उन्होंने पकड़ लिया था।

नई दिल्ली पहुंचने के बाद में अपने सीनियर्स से मिली और फिर सभी को बाय बोलकर हम सभी अपने अपने घर के लिए चल दिए।

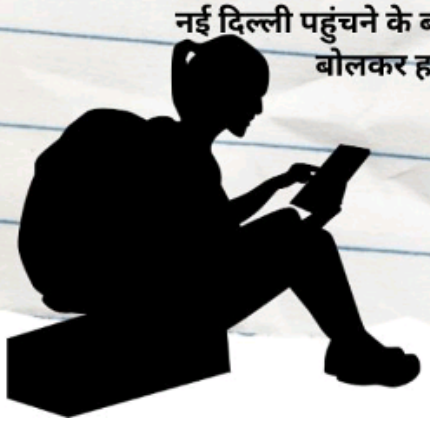

~ आशिका

एक यात्रा ऐसी भी

खचाखच यात्रियों से भरी ट्रेन जिसमें आने-जाने वाली गैलरी भी लोगों के सामानों से पटी और लोगों से भरी पड़ी थी, स्थिति ऐसी कि शंका निवारण या किसी अन्य काम से यदि मुड़झे अपना स्थान छोड़कर बाहर जाना हो तो उसके दो ही तरीके थे, एक तो लोगों के सामानों और बोरियों को पैर से कुचलते और गैलरी में जमीन पर बैठे लोगों को जाने-अनजाने लगभग लात मारते निकालना पड़ता था, दूसरा यह है कि ट्रेन के शयनयान कोच के मध्यवर्ती सीटों तथा लोहे के सींकचों या यूं कहे हत्थों को पकड़ कर लोगों के सिर के ऊपर से होते हुए ट्रेन में कुछ-कुछ हवाई सफर तय किया जाता।

गोरखपुर रेलवे स्टेशन पर खड़ा में ट्रेन के भीतर की इस बदहाल और विषम स्थिति की कल्पना से बिल्कुल अनजान था। 12वीं करने के बाद तमाम विश्वविद्यालय जिसमें बनारस हिंदू विश्वविद्यालय और इलाहाबाद विश्वविद्यालय की प्रवेश परीक्षाओं में सफल होने के बाद भी उसमें प्रवेश न लेकर दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रवेश लेना, मेरे लिए कैसा निर्णय था इसका मूल्यांकन शायद उस समय मेरी क्षमता से परे था। परंतु एक बात स्पष्ट थी कि उत्तर प्रदेश से बाहर देश की राजधानी को देखने, समझने व उसकी प्रदूषित हवा में जीने की कामना। जिसमें ग्रीन हाउस गैस के तत्व तो थे ही साथ ही एक बेहतर भविष्य के लिए तमाम संभावनाएं भी घुली-मिली थी। खैर ट्रेन आती है, ट्रेन क्या आती है उसे लोहे की पटरियों पर ट्रेन सदृश मधुमक्खियां का छत्ता कहना उचित होगा जिसमें चढ़ने तथा ट्रेन के खुलने के बीच का समयांतराल मेरे लिए शायद हमेशा अविस्मरणीय रहे। फरवरी यानी बसंत के गुलाबी ठंड वाले माह की 16वीं तारीख़ का वह अनुभव किसी ज्येष्ठ मास के उमस भरी गर्मी तथा अफनाहट से कम नहीं था, ऐसी भीड़ में पहली बार दिल्ली का सफर मेरे लिए किसी सफर से कम नहीं था, यद्यपि इस भीड़ में स्वयं को संभालना कठिन था तथापि मेरे पास संभालने के लिए कुछ और वस्तुएं यथा चावल की २५ किलो की बोरी, एक पिट्ठू बैग और एक ट्रॉली बैग भी था, जिसमें परिवार के सदस्यों का लाड-प्यार भरा था। ट्रेन के खुलने पर जान में जान आयी। इस विषम स्थिति में जहां एक पल को यह अनुभव होने लगे कि प्राण पखेरू अब उड़े कि तब, ऐसी स्थिति में मुझे अंतर्मन से साहस और बल मिल रहा था, मनोकामना किसी तरह रात्रि के बीतने और प्रातः राजधानी के दर्शन करने को थी, सो मनोकामना पूर्ण भी हुई और मैं १७ फरवरी २०२१ को नई दिल्ली रेलवे स्टेशन पर अंततः पदार्पण करने में सफल हुआ। भोर का समय 4:30 बज रहा था। स्टेशन से बाहर आने पर दिल्ली की हड्डी छेद कर अस्थि मज्जा तक कंपाने वाली ठंडी से सर्वप्रथम परिचय हुआ और उसके प्रभाव से मैं अछूता न रहा। मैं अपने शरीर में ठंड से हो रही कंपन को सहजता से अनुभव कर पा रहा था। एक-दो ऑटो वाले से बातचीत करने के बाद मैं उस पर सवार हो दिल्ली में अपने नए ठिकाने की ओर निकल दिया।

भोर का समय, दिल्ली की सूनी, चमचमाती सड़कें और विभिन्न संस्थानों के कार्यालयों के भवन व उनके बोर्ड जिनको मैं अब तक केवल समाचार पत्रों या टीवी में देखा करता था आज मेरे प्रत्यक्ष थी। खुली ऑटो में भोर की ठंडी हवाएं और मेरी मनोभावनाएं मुझे अंदर तक रोमांचित कर रही थी जो बीच-बीच में एक कंपन की लहर-सी या बिजली के झटके के समान पूरे शरीर को एकाएक कंपकंपा जाती।

ऑटो मुझे मेरे गंतव्य की ओर लेकर आगे बढ़ने के क्रम में चला जा रहा था कि अचानक मुझे कुछ अनोखा, भोर में स्ट्रीट लैम्प की दूधिया प्रकाश में नहाया हुआ आकाश के श्वेत ध्रुव तारे के समतुल्य आकर्षक और मनहर दृश्य दिखा। ऑटो में बैठा मैं उसके चप्पे-चप्पे को अपनी आंखों में बसा लेना चाहता था, क्योंकि वह मुझे किसी विदेशी धरती में घूमने जैसा आनंद दे रहा था उसमें लगभग हर जगह एकरूपता चाहे उसके रंग में या उसके बनावट में। संरचना ऐसी की उसका चक्कर लगाता ऑटो उसकी एक ओर से दूसरे छोर पर पहुंच गया, दिल्ली से बिल्कुल अपरिचित मुझे यह भ्रम होता रहा कि ऑटो में बैठा में एक ही जगह का बार-बार चक्कर लगा रहा हूं। उसके कुछ दिन बाद मुझे ज्ञात हुआ यह दिल्ली के लुटियंस जोन में स्थित एलीट मार्केट कनॉट प्लेस है, जिससे में टीवी में न्यूज के एक प्रोग्राम भैया जी कहिन के माध्यम से पूर्व परिचित था।

ऑटो ने मुझे मेरे गंतव्य तक सकुशल पहुंच दिया। गांव के उन्मुक्त आकाश से बिछुड़कर शहर के छोटे से अपने कमरे में जब पहुंचा तो

मन में कहीं कचोट-सी उठी। घर-परिवार का ध्यान साहस बिजली-सा मन में कौंध गया फिर दिल्ली में अपनी तपस्थली समझकर मैंने उस कमरे के प्रति स्वयं को समर्पित कर दिया। एक घंटे आराम करने के बाद ठंडे पानी से स्नान करने पर पूरे शरीर में पांव से दांतों तक कंपन हो रही थी। इसके पश्चात वह शुभ घड़ी अब मेरे सामने थी। कोरोना के महामारी के दौरान लगभग 4 महीने की ऑनलाइन शिक्षण व्यवस्था के पश्चात् मैं अपने स्वपनों की शरण स्थली अपने नए कॉलेज को देखने के लिए आतुर था। उत्कंठा ऐसी कि इतनी विषम परिस्थितियों में यात्रा पूरी करने के बाद भी शरीर में जैसे ऊर्जा का ज्वालामुखी फूट रहा हो, थकान का नामोनिशान नहीं। कॉलेज जाने से पहले पेट पूजा की व्यवस्था करके मैं अपने कॉलेज के लिए निकल गया जिसके नाम से तो परिचित था लेकिन स्थान से बिल्कुल अपरिचित। बस स्टैंड पर पहुंचकर गूगल मैप की सहायता से मैंने नई दिल्ली तक जाने वाली बस नम्बर तो खोज निकली फिर भी आत्मसंतुष्टि के लिए मैंने पास खड़े लोगों से एक बार पूछ लेना जरूरी समझा। बस आती है, बस में चढ़ने को भीड़ दौड़ी, में भी अपनी पूरी जद्दोजहद लगाकर बस में चढ़ने में सफल हुआ। बस में मुझे दिखा कि कंडक्टर अपनी सीट पर विराजमान है और लोग उसके पास जाकर अपना टिकट खरीद रहें हैं। यह व्यवस्था मेरे लिए बिल्कुल नई थी क्योंकि उत्तर प्रदेश परिवहन की बसों में मैंने कंडक्टर को सीट पर जा जाकर टिकट काटते देखा था। निर्धारित व्यवस्था का पालन करते हुए मैंने मिंटो रोड तक का टिकट लिया और भीड़ से ठसाठस भरी बस में बैठने के लिए सीट से वंचित रहने की स्थिति में खड़े लोगों की तरह मेरे भी पैर एक स्थान पर अंगद की पैर की तरह जम गए। बस के चलने तथा रुकने पर दरवाजों का अपने आप खुलना और बंद हो जाना मेरे लिए कौतूहल और विस्मय का विषय था, मेट्रो की प्रणाली से मैं परिचित था लेकिन बस में भी ऐसी कोई प्रणाली काम करती है, मैं इससे नितांत अपरिचित था। मुझे प्रतीत होता कि बस के दरवाजे बस के रुकने के झटके से खुल जाते हैं और एकाएक चलने की झटके से बंद हो जाते हैं।

जैसे हम बस के रुकने पर आगे की तरफ झुक जाते हैं और बस के चलने पर पीछे की तरफ। मैं दरवाजे के खुलने और बंद होने में न्यूटन की गति विषयक प्रथम नियम यानी जड़त्व का नियम का दर्शन कर रहा था। साथ ही रास्ते भर में गूगल मैप से बस के रूट का लगातार निरीक्षण कर रहा था कि बस अपने निर्धारित पथ का ही अनुसरण कर रही है न। जैसे दो नयी संस्कृतियों के टकराने से एक नई ऊर्जा उत्पन्न होती है वैसे ही मैं अपने भीतर के अंतर्द्वन्द्व से एक रोमांचित करने वाली ऊर्जा का अनुभव कर रहा था। शिवाजी पार्क उतरने के बाद हाथ में गूगल मैप पर जाकिर हुसैन दिल्ली कॉलेज सर्च करके मैं अपने डरे, सहमे, संयमित और सधे कदमों से अपने गंतव्य की ओर गूगल मैप द्वारा बताए जा रहे रास्ते पर धीरे-धीरे बढ़ा जा रहा था, अचानक एक गगनचुंबी शीशे वाली इमारत देखी तो लगा कि कहीं यही तो मेरा कॉलेज नहीं निकट जाने पर पता चला इसका नाम तो कुछ और है। मैं आगे बढ़ा और ज़ाकिर हुसैन कॉलेज बस स्टैंड दिखा तो मन को आराम मिला। कोविड के बाद खुले कॉलेज के पहले दिन प्रवेश के लिए मुख्य द्वार पर विद्यार्थियों का जमघट लगा था जो अपने निर्धारित डॉक्यूमेंट दिखाकर अंदर प्रवेश ले रहे थे, तयशुदा नियमों का पालन कर अंततः में अपने कॉलेज में प्रविष्ट हुआ जहां मैं अपने उन तमाम सहपाठियों से साक्षात्कार हुआ जिनसे 4 महीने पहले ऑनलाइन माध्यम से परिचित हुए थे। परिचय के क्रम में कई विनोद पूर्ण प्रसंग भी हुए, कई मित्र अपने व्हाट्सएप के डीपी से बिल्कुल अलग छवि में दिखे। कई दोस्तों को तो मैं दूसरों के नाम से संबोधित किया हालांकि कुछ चेहरे प्रथम दृष्ट्या ही पहचान में आ गए थे मुझे तो लगभग सभी ने सही नाम से पहचाना हालांकि मैं इस काम इतना दक्ष नहीं था। परिचय के बाद कक्षाएं प्रारंभ हुई योगेश्वर सर, नीलम मैम, सज्जन सर से परिचय और फिर अपने बेहद सहयोगी सीनियर्स से भी मिलना हुआ।

तो कुछ ऐसी थी सिद्धार्थनगर से कॉलेज के प्रथम दिवस की मेरी यात्रा।

धन्यवाद

~ देवांश पांडे

बात-चीत

दिनांक 25 अप्रैल 2024, पाटलिपुत्र स्थित उपेंद्र महारथी शिल्प अनुसंधान संस्थान पटना बिहार , मैं भ्रमण का अवसर प्राप्त हुआ अथवा वर्तमान समय में शिल्प की योगदान से किस प्रकार रोजगार का सृजन कर स्वावलंबी बनने का प्रयास किस प्रकार करना है इस विषय पर कुछ कलाकारों से बातचीत की। और एक संक्षिप्त साक्षात्कार लेने में हमें सफलता प्राप्त हुई। संतोष कुमार बीते 20 वर्षों से टिकुली कला में अपना योगदान तथा महिलाओं और अभ्यर्थियों को प्रशिक्षण प्रदान कर रहे हैं। वर्ष 2013 में इन्हें 'बिहार राज्य पुरस्कार' से सम्मानित किया गया तथा 'स्किल इंडिया आट फेयर ' में इन्हें सिल्वर मेडल से नवाजा गया। महाशय ने वर्ष 2020 में ऑनलाइन के माध्यम से अमेरिका के विद्यार्थियों को इस कला के बारे में बताया और उन्हें दो दिवसीय कार्यशाला के जरिए टिकुली कला को सिखाया।

इन्होंने प्रगति मैदान, सूरजकुंड, हैदराबाद, कोलकाता, मुंबई जैसे शहरों में प्रदर्शनी सह बिक्री केंद्र स्थापित कर इस कला को और आगे बढ़ने का प्रयास किया। प्रश्न : क्या टिकुली हस्तकला अपने इतिहास के साथ-साथ वर्तमान में रोजगार के अवसर प्रदान कर सकती है?

उत्तर – जी हां, भारत और बिहार राज्य का इतिहास वर्षों से ही एक महत्वपूर्ण चर्चा का विषय बना रहा है, इस हस्तकला में हम अपने पौराणिक ग्रंथ जैसे महाभारत रामायण और श्री कृष्णा और राधा के जीवन पर आधारित चित्र का निर्माण करते हैं जिससे उनके बीच संबंध समाज में उनकी प्रतिष्ठा और तत्काल समय की परिस्थितियों का हमें पता चल सके। और वर्तमान में यह चित्रकला सिर्फ कागज पर ही ना होकर रोजमर्रा के कार्य में आने वाले वस्तुओं पर भी किया जाता है जैसे कांच की बोतल सर्विंग ट्रे हस्त निर्मित कान के झुमके बैग्स और कपड़ों पर बनाया जाता है जिसकी मांग भारत के साथ-साथ अमेरिका जापान चीन और इंग्लैंड जैसे शक्तिशाली देश में भी देखने को मिलती है

और तकरीबन 20 से 22 हजार रुपए एक कलाकार अपनी कल के जरिए कमाने में सफल रहता है और समय-समय पर भारत सरकार और बिहार सरकार उनके सहायता और उनके विकास के लिए नए-नए योजनाओं का सृजन भी करते हैं।

~ साहिल सिन्हा

उम्र के पर

80 वर्ष की श्रीमती उर्मिला देवी दरभंगा के एक सामान्य से गांव के रहने वाली ग्रहणी हैं। विवाह के पश्चात इनके सासू मां के द्वारा गोबर से आंगन में तरह-तरह के वस्तुओं के निर्माण
के जरिए हस्तकला में रुचि पैदा करवाया गया। और धीरे-धीरे बढ़ते उम्र के साथ-साथ इनकी संघर्ष और इनका दृढ़ निश्चय ही आज उनकी सफलता का महत्वपूर्ण कारक साबित हुआ। श्रीमती उर्मिला देवी को बिहार राज्य पुरस्कार , उज्जैन कवि कालिदास पुरस्कार तथा राष्ट्रपति भवन में कला क्षेत्र में इनकी योगदान के लिए इन्हें पुरस्कार से सम्मानित किया गया। वर्तमान में एक गरीब महिलाओं को रोजगार और कला से जोड़ने का कार्य करती है तथा इसके साथ-साथ वह एक समाज सेविका भी है।

प्रश्न: कला और साहित्य आपस में किस प्रकार एक दूसरे से जुड़े हैं?

उत्तर- हम आज जो भी चित्र बनाते हैं इसका केंद्र ही हमारा साहित्य रहा है। साहित्य समाज के विषय पर आधारित होता है और हमारा चित्र भी समाज के विभिन्न पहलुओं विभिन्न विचारधारा तथा विभिन्न रीति रिवाज को ही प्रदर्शित करता है। जिस प्रकार रामायण में राम का वनवास हो लंका का दहन हो सीता का स्वयंवर हो हनुमान की भक्ति हो यह सब हमारे साहित्य में वर्णित है और यही हमारे चरित्र का मुख्य आकर्षण और केंद्र बिंदु भी रहा है। इसीलिए मेरे विचार से कला और साहित्य का आपस में एक संबंध जरूर है।

प्रश्न: जाकिर हुसैन दिल्ली महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय के माध्यम से छात्रों को क्या संदेश देना चाहेंगी जिससे वह सफलता प्राप्त कर सके?

उत्तर: दिल्ली विश्वविद्यालय की सभी कॉलेज शिक्षा के लिए भारत में सबसे अधिक लोकप्रिय संस्थान है जिसमें पढ़ने वाले हर छात्र छात्राएं किसी न किसी क्षेत्र में अपने प्रतिष्ठा स्वयं बनाते हैं। विश्वविद्यालय उनके कौशल और उनके हुनर देश के सामने रखते है तथा समय-समय पर विभिन्न कार्यशाला विभिन्न आयोजनों के माध्यम से छात्रों को हम जैसे सामान्य लोगों से अवगत करवाते हैं हमारे जैसे अशिक्षित महिला कलाकारों का साक्षात्कार तथा सम्मान के लिए जाकिर हुसैन दिल्ली महाविद्यालय और दिल्ली विश्वविद्यालय का हृदय से आभार व्यक्त करती हू और यही कहना चाहूंगी की सफलता की पहली सीढ़ी आपका प्रयास है यदि आपका प्रयास पूरी ईमानदारी के साथ है तो सफलता स्वयं आपके हाथों में है और महाविद्यालय आपको उसे सफलता तक ले जाने में सहायक होंगी।

~ साहिल सिन्हा

कला की यात्रा

भारत का इतिहास अपने गौरव के साथ-साथ विभिन्न कलाओं के लिए भी विख्यात है विभिन्न संस्कृति विभिन्न धर्म तथा विभिन्न खान-पान और वेशभूषा सदियों से भारत की लोकप्रिय और विश्व विख्यात रही है। भारत के कोने-कोने में हमें कला के अनेक रूप देखने को मिलते हैं। ऐसे ही सुप्रसिद्ध कला की तलाश हमारे बिहार राज्य के राजधानी में स्थित उपेंद्र महारथी शिल्प अनुसंधान संस्थान में जाकर समाप्त हुई।

25 अप्रैल 2024 मुझे पाटलिपुत्र स्थित उपेंद्र महारथी शिल्प संस्थान में भ्रमण का अवसर प्राप्त हुआ। संस्थान में बिहार के प्रत्येक जिले से कुछ ना कुछ प्रसिद्ध शिल्प कार्य का प्रशिक्षण वहां पर दिया जाता है तथा प्रदर्शनी और बिक्री का केंद्र भी है इस पूरे संस्थान को संचालित करने में बिहार सरकार का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। संस्थान में कुल 17 कलाओं का प्रशिक्षण दिया जाता है जिसमें सबसे महत्वपूर्ण कल की विधा है मधुबनी ,टिकुली ,भागलपुर की मंजूषा ,पाषाण शिल्प ,टेराकोटा, घास के आभूषण ,कढ़ाई बुनाई और पारंपरिक कोहबर की डिजाइन।

बहुत ही महान कलाकारों के योगदान से संस्थान में ग्रामीण तथा अशिक्षित महिलाओं को निशुल्क प्रशिक्षण के साथ-साथ रोजगार के अवसर में प्राप्त करवाता है जिससे वह अपने हुनर और अपने जीविका के स्रोत को पहचान सके। 17 कलाओं में जो सबसे प्रसिद्ध कला है वह है मधुबनी।

अपनी संस्कृति ऐतिहासिक दृश्य और ग्रामीण परिवेश के लिए मधुबनी को बिहार के कलाओं में सबसे उच्च कोटि का दर्जा प्राप्त है। मुख्यतः इस चित्र को महिलाओं द्वारा बनाया जाता है जिसमें किसी प्रकार के कला के कोई नियम नहीं होते तथा इसके रंग भी प्राकृतिक होते हैं। राम सीता विवाह राम वनवास कृष्ण लीला राधा कृष्ण रासलीला इस कला के मुख्य पात्र है। परंतु आज समय के साथ-साथ भारत की स्वतंत्रता संग्राम भारत की आजादी और आजादी के बाद की राजनीति पर चित्र बनाया जा रहा है।

मधुबनी के कई ग्रामीण महिलाओं को भारत सरकार द्वारा पद्मश्री पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया है जिन्होंने इस कला को विदेशों तक पहुंचा और आज इस कला की मांग चीन,अमेरिका,जापान ,इंडोनेशिया, ब्रिटेन और मिस्र जैसे देशों में देखी जा सकती है।

मिट्टी से निर्मित टेराकोटा मूर्ति

संस्थान के भ्रमण के साथ हमें यह भी बताया गया कि इस संस्थान में बिहार सरकार द्वारा चार नए भवनों का शिलान्यास करवाया जा रहा है तथा 56 कमरे पूर्ण आधुनिक सुविधाओं के साथ तैयार किया जा रहे हैं जिससे आने वाले समय में महिलाओं को और कला प्रेमियों को बिहार की कलाओं से रूबरू करवाया जा सके और उनका प्रशिक्षण दिया जा सके। प्रशिक्षण के बाद संस्थान द्वारा प्रत्येक वर्ष 'बिहार राज्य पुरस्कार ' प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है तथा 40 मेधावी कलाकारों को बिहार सरकार द्वारा बिहार राज्य पुरस्कार और 70000 रुपए के पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है। और भविष्य में उन्हें विभिन्न राज्यों में प्रदर्शनी तथा प्रशिक्षण के लिए संविदा पर नियुक्त किया जाता है।

संस्थान के निर्देश के द्वारा हमें यह भी बताया गया कि आज वर्तमान में बिहार के कलाओं की मांग विश्व के साथ-साथ भारत में भी अधिक हुई है और संस्थान में निर्मित प्रत्येक शिल्प को बाजार मूल्य से अधिक सरकार द्वारा खरीद कर उसे विदेश तक पहुंचाया जाता है जिससे संस्थान परिसर में प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके अभ्यर्थियों को आर्थिक सहायता के साथ-साथ रोजगार के अवसर भी मुहैया कराए जाते हैं। संस्थान का नामकरण भी बिहार के सुप्रसिद्ध कलाकार श्री उपेंद्र महारथी जी के नाम पर ही किया गया है जिन्होंने बिहार के कलाओं को सर्वप्रथम विदेश में फैलाया और इसी क्रम में वह जापान में इस कला का सबसे पहले प्रशिक्षण उन्होंने वहां के लोगों को दिया था। संस्थान परिसर में विभिन्न कलाओं के साथ-साथ सजावट का भी और सफाई का भी पूर्ण ध्यान रखा गया है।

~ साहिल सिन्हा

नवोन्मेष'२४

नयी दिल्ली, 22 अप्रैल 2024 ज़ाकिर हुसैन दिल्ली महाविद्यालय में हिन्दी विभाग के 'अरुणोदय: हिन्दी साहित्य सभा द्वारा एकदिवसीय नवोन्मेष कार्यक्रम का आयोजन किया गया।

इसी कार्यक्रम की शुरुआत हिन्दी बिभाग के प्रभारी डॉ विजेंद्र सिंह चौहान, डॉ नीलम एवं अन्य गणमान्य शिक्षकों के द्वारा दीप प्रज्ज्वलन से की गई।

इस कार्यक्रम में 'सर्वेश्वरदयाल सक्सेना द्वारा रचित 'बकरी नाटक का मंचन किया गया। इस राटक का भली प्रकार से मंचन करने में साहित्य सभा के सदस्यों का महत्वपूर्ण योगदान रहा। इस नाटक का प्रमुख स्वर परिवर्तन सहा परिवर्तन के सार को प्रतिबिंबित करते हुए निम्न पंक्ति भी गायी गई:

"बहुत हो चुका अब हमारी है बा बदल के रहेंगे ये दुनिया तुम्खरी

इस नवोन्मेष कार्यक्रम में विद्यार्थियों द्वारा दिया गया 'भारतीय भाषाओं का परिचय महत्वपूर्ण एवं आकर्षण रहा जिसमें सभी भारतीय भाषाओं के परिचय देने के लिए झात्रों ने संगीत एवं नृत्य विधा की सहायता ली।

इस कार्यक्रम की शोभा बढ़ाने के लिए एवं प्रतिभागियों का उत्साहवर्धन करने के लिए हिंदी विभाग के शिक्षक डॉ. पवन कुमार एवं अन्य शिक्षकों और श्रोता विद्यार्थियों द्वारा कार्यक्रम को सफल बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। धन्यवाद ज्ञापन साहित्य सभा की संयोजिका डॉ. नीलम ने दिया।

~ विशाल

नवोन्मेष'२४
की कुछ झलकियां

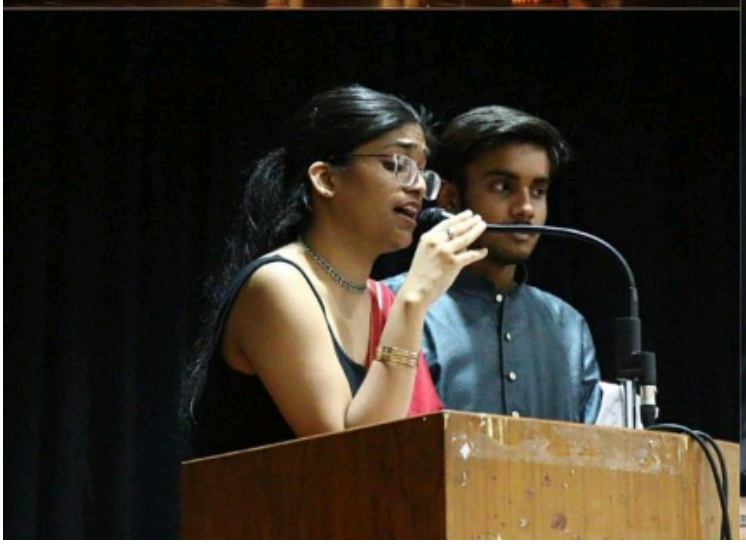

DELL

the world needs dreamers

धन्यवाद